ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-6* Issue-2* March- 2021
Innovation The Research Concept

रसवादी समीक्षक डॉ० नगेन्द्र

Rasheed Critic Dr. Nagendra

Paper Submission: 02/03/2021, Date of Acceptance: 15/03/2021, Date of Publication: 16/03/2021

पूनम श्रीवास्तव
सहायक प्राध्यापक,
हिन्दी विभाग,
सल्तनत बहादुर पी. जी. कालेज बदलापुर जौनपुर
उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

वर्तमान युग में घटती संवेदनाओं को स्थापित करने में रस वादी समीक्षक डा. नगेन्द्र का योगदान मानवीय मूल्यों के लिए वरदान स्वरूप हैद्यआपने अपने बहुआयामी व्यक्तित्व से काव्य समीक्षा के संसार को समृद्ध किया है ।

इस प्रकार भारतीय कलावाद क्रमशः अलंकार रीति तथा वक्रोक्ति सिद्धान्तों में प्रस्फुतित हुआ और वक्रोक्ति की प्रकल्यना में उसका पूर्ण विकसित रूप सामने आया । इस सिद्धान्तों में काव्य को सारतः कला माना गया और अनुभूति का उसका पोषक तत्व ।

In the present era, the contribution of Dr. Naagendra, a Rasadi critic in establishing the decreasing sensations, is a boon for human values. He has enriched the world of poetic review with his multi-faceted personality.

In this way, Indian artism originated in the Alankar ritual and Vigrokti principles respectively and its fully developed form emerged in the practice of Vigarokti. In this theory, poetry is considered to be essentially art and its nutrient of cognition.

मुख्य शब्द : रस, साहित्य में आनंदमय स्थिति, सहृदयता, रस का वस्तु परक अर्थ।

Rasa, Blissful Position In Literature, Gentleness, Object Object Of Rasa. Meaning

प्रस्तावना

डॉ0 नगेन्द्र रसवादी समीक्षक है। उन्होनें रस सिद्धान्त की उचित समीक्षा की है। ये रस सिद्धान्त के उचित मूल्यांकन हेतु रस के अन्य अर्ध चक्रों से निकलकर उसके सही अर्थ तक पहुँधकर रस की समीक्षा करते दिखाई पड़ते हैं। प्रस्तुत लेख में डॉ० नगेन्द्र के रस सम्बन्धी विचार तथा अन्य मूल सिद्धान्तो में रस का विशेष महत्व पर बल दिया है।

विशेष आख्या

1. रस का अर्थ
2. भारतीय काव्यशास्त्र के अन्य मूल सिद्धान्तों रस का सम्बन्ध। पाश्चात्य काव्य शास्त्र में रस।

रस का अर्थ–भारतीय काम शास्त्र में प्रचलित रस के तीन अर्थ–

वस्तु परक अर्थ

जिसके अनुसार रस काव्यगत है। अर्थात यह शब्दार्थ के माध्यम से कवि की सर्जनात्मक भावना की कलात्मक अभिव्यक्ति है। वह रवि की भादना का–प्रकृत भावना का नहीं–कल्पना के द्वारा जीवनगत अनुभूमि के सुजत या पुनः सृजन में प्रवृत भावना का शब्द मूर्त रूप है। सीधे शब्दों में यह भाव पर आश्रित काव्य सौन्दर्य है।

भावपरक अर्थ

जिसके अनुसार रस की स्थिति सहृदय में है अर्थात व नाना भावमय काव्य के द्वारा सहृदय के चित्र में उबुद्ध सुख–दुखमयी रागात्मक चेतना है।

आनन्द परक अर्थ

जिसके अनुसार रस राहृदयगत ही है। काव्य के मनन से उबुद्ध व्यक्ति संसर्गों से मुक्त विशुद्ध भावों के माध्यम से आत्म विश्रान्ति की (आनन्दमय) तना का नाम रस हैं। आधुनिक शब्द में चित्र की समीकत अवसथा के आस्वाद का नाम रस है।

उपर्युक्त तीनों तथ्यों पर ध्यान देने से दो याते स्पष्ट होती है पहला यह कि रस राग तत्व की प्रधानता है और वहीं दूसरा है कलातत्व (1)

भारतीय काव्य शास्त्र के अन्य मूल सिद्धान्तों के साथ रस का सम्बन्ध–डॉ० नगेन्द्र ने रस सिद्धान्त का भारतीय काव्य सिद्धान्त में सबसे प्रधान तथा मुख्य सिद्धान्त बताया है। उनका कथन है कि रस सिद्धान्त के पश्चात ही अलंकार रीति, ध्वनि वक्रोवित तथा औचित्य सिद्धान्तों का विकास हुआ है। काव्य के अंतरंग और बहिरंग आत्मा और शरीर के आधार पर यदि वर्ग विभाजन किया जाये तो अलंकार रीति तम क्रोचित को देहवादी या यरतुवादी वनि था औधित् को आरमवादी राम्द्रदाय कहा जा सकता है रस सिद्धान्त के साथ आत्मयादी सम्प्रदायो का तो प्रत्यक्ष एवं घनिष्ठ सम्बना है। इसके उपरान्त एक प्रकार से रस का आधार पर ही पनि और औचित्य दोनों की कल्पना की गई है। भारतीय माग्य शास्त्र में प्रपलित मूल सिद्धान्तों के साथ रस का सम्बन्ध स्पष्ट करने डॉ० नगेन्द्र का मत अत्यन्त उपयोगी है–

रस सिद्धान्त भारतीय काव्यशास्त्र का सबसे प्राचीन व्यापक एवं बहुमान्य सिद्धान्त है आरम्भ में कुछ ऐसी भ्रान्ति उत्पन्न हो गयी थी कि रस के विभाव अनुभाव आदि का उपस्थापन नाट्य में ही सम्भव हो सकता है। अतः उसका वास्तविक क्षेत्र नाट्य ही है। इसी क्रांति के परिणाम स्वरूप काव्य के क्षेत्र में शब्दार्थ की परिधि के भीतर रस से भिन्न आत्मभूत तत्व की खोज आरम्भ हुई और शब्दार्थगत चमत्कार के दो प्रमुख रूप अलंकार और रीति सामने आये। परन्तु यह भ्रान्ति जल्दी दूर हो गई और शब्दार्थ के क्षेत्र में ही प्रस्तुत की सम्भावना व्क्त हो गई आनन्दवर्धन ने ध्वनि की उदभावना द्वारा शब्दार्थ की निहित शक्तियों का उद्घाटन किया और व्यंजना के द्वारा विभावादि को उपस्थित करने वाली नाट्य सामाग्री के अभाव की पूर्ति की अभिनवगुप्त ने इस तथ्य को और भी अधिक स्पष्ट किया। काव्य के साथ रस का उचित सम्बन्ध स्थापित हुआ और शब्दार्थो के सम्बन्ध में ही रस सिद्धान्त की पूर्णप्रतिष्ठा हो गयी। ध्वनि की स्थापना से पूर्व अलंकार और रीति सिद्धान्तों के अन्तर्गत भी रस की एकान्त उपेक्षा नहीं हुई थी। अलंकार वादियों ने रसवत् अलकार के रूप में और रीतिकार ने रीति के आधार भूतपूर्व के पोषक तत्व के रूप में उसे शब्दार्थ–काव्य का शोभाचायक धर्म मान लिया था। ध्वनि की स्थापना के बाद भी यह चिन्ताधारा वक्रोधित सिद्धान्त के रूप में प्रकट हुई। कुतक ने यदपि वक्रता को ही काव्य की प्राण चेतना माना फिर भी रस के प्रति उनके मन में अगाध आकर्षण था–रस को वक्रता की स्मृति का मुख्य आधार माना ।

इस प्रकार भारतीय कलावाद क्रमशः अलंकार रीति तथा वक्रोक्ति सिद्धान्तों में प्रस्फुतित हुआ और वक्रोक्ति की प्रकल्यना में उसका पूर्ण विकसित रूप सामने आया । इस सिद्धान्तों में काव्य को सारतः कला माना गया और अनुभूति का उसका पोषक तत्व ।

उधर सम्यक रूप से प्रतिष्ठित हो जाने के बाद रस सिद्धान्त ने भी अलंकार रीति तथा कला के अन्य तत्वों का उचित उपयोग किया सामान्यतः तो अलंकार को आभूषण और रीति को अंग संस्थान के समान नहीं माना गया परन्तु यह केवल स्थूल कल्पना थी। तत्व दृष्टि से गुण अलंकार तथा अन्य कला उपकरणे की विभावादि का साधारणीकरण करने और फिर उसके द्वारा भाव को व्यक्ति संसर्गों से मुक्त कर आस्वाद का विषय बनाने के लिए आवश्यक ठहराया गया। शब्दार्थ के कलात्मक प्रयोग के बिना न तो विभाव अनुभाव आदि की साक्षात उपस्थापना ही राम्य है। और न उनका साधारणी करण अर्थात् देशकाल के बन्धनों से मुक्त सर्वसहृदय गम्य रूप की ही कल्पना की जा सकती है। और इसके बिना स्थायीभाव की निदिन प्रतीति सम्भव नहीं हो सकती। अतः अलंकार गुण (रीति) बिम्द विधान प्रथना कल्पना आदि भी के रस को सहायक उपकरण है और रस प्रतीत के लिए उनकी आवश्यकता अनिवार्य है ।

अलंकार रीति और व्रक्रॉति के रस के साथ वही सम्बन्ध है जो आधुनिक आलोचना शास्त्र की शब्दावली में कार्य के अन्तर्गत जलातत्व का अनुभूति तत्व के साथ है। कास्य में दोनों का रामम्दय अनिवार्य है। वास्तव में आज तो दोनो के तादात्म का नाम श्री काव्य माना जाता है कला या कलात्मक अभिव्यक्त के बिना भाकामनुभूति काल अनुभव का विषय ही रह जाती है। और भावना को स्पर्श के बिना वाला शब्द कीला भाय। दोनों के विषय में अतिबाद से हानि हुई कला के क्षेत्र में तो अतिवाद को कारण अनर्थ होता ही आया है किन्तु रस विषयका अतिबाद भी मान्य नहीं हो सकता जिस प्रकार भाव विरहित कला काव्य नहीं है उसी प्रकार केल भाय का उदगार भी काम नहीं है, क्योकि ऐसा मान लेने पर प्रत्येक व्यक्ति के हर्ष विषाद का उदय का हो जायेगा। शनि और रस का सम्बन्ध और भी परंग है क्योकि दोनी पनि प्रकल्पना राहदयनिष्ठ है। दोनों में भेद केपल यही है कि रसः सिद्धान्त जहां कल्पनात्मक भावना को प्राणतत्व मानता है वहां ध्वनि सिद्धान्त भावरेखित कल्पना को। और यह भेद वास्तव में इतना सूक्ष्म है कि कालान्तम में इसका एक प्रकार से लोप ही हो गया। परन्तु यदि दोनों का पृथक अस्तित्व स्वीकार करना है तो इसको ध्यान में रखना ही पड़ेगा।

औचित्य सिद्धान्त का विकास रस सिद्धान्त में से ही हुआ है अतः वह उसका एक प्रकार से अंग ही है। रस की परिधि में ही औचित्य की सत्ता और सार्थकता है।

इस प्रकार रस सिद्धान्त एक व्यापक सिद्धान्त है और उसके दृष्टिकोण मैं दिवक पुष्ट सहिष्णुता मिलती है अनुभूति की सीमा के भीतर रहकर वह अलंकार, रीति, गुण, यक्रता और सभी के साथ पूर्ण सहयोग करता है और सभी का उचित सहयोग प्राप्त करता है उसका धैर्य वहीं टूटता है जहाँ शब्दार्थ के साथ भावना का सम्बन्ध टूट जाता है। इस दृष्टि से आप यनि सिद्धान्त को और भी उदार कह सकते है। परन्तु यह उदारता बड़ी महंगी पड़ती है। इससे दाता के स्वरूप की हानि हो जाती है और अदाता को अद्यम विशेषण का भागी बनना पड़ता है। तब ऐसी उदारता किस काम की।

सहयोग के अभाव में जब प्रतियोग या तारतम्य का प्रश्न उठता है तो रस का रूप और भी निखर आता है। अन्य सिद्धान्तों के सन्दर्भ में रस की स्थिति का मानचित्र कुछ इस प्रकार बनता है–

अलंकार–सिद्धान्तः शब्दार्थ –(उक्ति) चमत्कार आनन्द = काव्यास्वाद
रीति सिद्धान्त–शैली–सौन्दर्य आनन्द = काव्यास्वाद
वक्रोक्त सिद्धान्तरू कवि व्यापार या कला आनन्द–काव्यास्वाद
ध्वनि सिद्धान्त – रमणीय (भावप्रेरित) कल्पना शब्दार्थ मयी अभिव्यक्ति आनन्द = काव्यास्वाद

इन सब में आनन्द तत्व समान है उसको निकाल देने के बाद अलंकार राति कोवित एवं औचित्य के साथ रस पो तारतम्य का अर्थ रह जाता है, क्रमशः उक्ति अमत्कार रोली, कला रमणीय कल्पना एवं भाव प्ररित विदेक के साथ कल्पना रमरीय भावना का तारतम्य और इसका निर्णय करना कठिन नही है–

वास्तव में काव्य के अन्तर्गत सभी का महत्व होने पर भी इनमें से कोई भी तत्व स्वतंत्र रूप से भाव की समता नहीं कर सकता, क्योकि सम्पूर्ण जीवन का ही प्रेरक तत्व भाव है। जीवन में रस ही भाव के अभिषेक से आता है चारित्र्य की समृद्धि और जीवन के मूल्यों का आधार भाव ही है। और आनन्द का भी दही रूप प्रबल एंव गम्नीर होता है, जो भाव के माध्यम से सिद्ध होता है, भाव से असम्पूक्त कल्पना का चमत्कार यह शैली अथवा उवित्त का चमत्कार कौतूहल से अधिक नहीं होता तर्क के अतिरिक्त अनुभव के आधार पर भी यह स्वतः सिद्ध है कि काव्य का वहीं तत्व स्थाई होता है जो हृदय के संस्कार में बस जाता है, और यह तत्व है भाव। अतः काव्य के अन्य समस्त तत्वों की अपेक्षा भारत का गौरव अक्षुण्ण है, रहा है, और रहेगा। और इसी अनुपात से काव्य के विभिन्न सिद्धान्तों की अपेक्षा रस सिद्धान्त का महत्व अक्षुण्ण है, रहा है, और रहेगा। (2)

इस प्रकार डॉ० नगेन्द्र में भारतीय काव्य में रस का अप्रतिम स्थान बताया। अपने मन्तव्य को निचोडकर निष्कर्ष प्रस्तुत किया जिस प्रकार रसवादी समीक्षक डॉ० नगेन्द्र ने भारतीय काव्य में रस का महत्व बतलाया उसी प्रकार रस का महत्व बताया।

अमेरिका इग्लैण्ड में नये कवियों ने जिस प्रकार स्वच्छन्दतावाद का उग्र विरोध किया है उसी प्रकार पश्चात्य काव्यशास्त्र भारतीय भाषाओं में (हिन्दी मराठी बांग्ला) आदि में स्वच्छता बाद के साथ–सार उनके समान धर्म वाद का भी योजनाबद्ध विरोध किया जा रहा है नई दिता रस की कविता है। (३)

इसके विरोध में प्रायः निम्नलिखित तर्क दिये जाते है–

1. रस का आधार है– समाहिति आद्ध किन्तु नयी कविता द्वन्द्व और असामंजस्य की कविता है।
2. नयी कविता वर्तमान पर केन्द्रित है, जबकि रस की दृष्टि अतीतोन्मुख रहती है–नयी कविता का विषय है क्षण की अनुभूति जयकि रस का आकर है जन्मान्तर्गत यास्ना और स्थायी भाव (4)
3. रस सिद्धान्त में कवि के व्यक्तित्व की पूर्ण उपेक्षा है– अतः रसानुभूति में केवल अव्यविगत भावना का आस्पद नहीं सम्व है, किन्तु आज की कविता का सम्बन्ध अत्यन्त व्यक्ति परक अनुभूति है जिसे रसानुभूति के समकट सहअनुभूति की संज्ञा दी जा सकती है रसानुभूति में व्यक्ति और विवेक जा परिहार होना आवश्यक है, किन्तु सहानुभूति का आस्वादन व्यक्ति चेतना के साथ ही हो सकता है। आत्म विलयन के आनन्द और भावावेग के परिपाक की दृष्टि से रसानुभूति अवश्य ही उत्कृष्ट कोटि की कही जायेगी परन्तु मानवीयता के विचार से यह अनुभूति को उससे उत्कृष्टतर नाननाही विदेक संगत दिखाई देता है। (5)

इस प्रकार रस की कल्पना नैतिक कल्पना है लोक और शास्त्र का औचित्य ही उसका उपनिषद है ।

अध्ययन के उद्देश्य

मानवीय मूल्यों की उपयोगिता समझ में आये, इसके लिए आवश्यक है कि संवेदनाओं को जिंदा रखा जायेद्य प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य व्यक्ति को सहृदयता सम्पन्न और मानवीय मूल्यों से सुशोभित करने का छोटा सा प्रयास है।

निष्कर्ष

निष्कर्षत हम कह सकते हैं कि रस वाद मनुष्य के लिए हर दृष्टि से अमिय तुल्य हैद्ययह मानवता को रसात्मक मानवता वाद से समृद्ध करने में समर्थ है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *रस सिद्धान्त– डॉ० नगेन्द्र पृ0 316*
2. *रस सिद्धान्त – डॉ० नगेन्द्र पृ0 325, 320, 327*
3. *रस सिद्धान्त – डॉ० नगेन्द्र पृ0 342*
4. *श्री वात्स्यायन के अभिभाषण*
5. *हिन्दी वार्षिकी–1061 गिरिजा कुमार माधुर*
6. *डॉ0 जगदीश गुप्तः नई कविता तथा आलोचना के कतिपय अंकों से उदघृत*
7. *डॉ० जगदीश गुप्तः नई कविता तथा आलोचना के कतिपय अंकों से उदघृत*
8. *रस सिद्धान्त डॉ नगेन्द्र पृ0 346*
9. *पोइट्री ऑफ एजरा पाउण्ड–कैनर पृ० 57*
10. *रस सिद्धान्त डॉ नगेन्द्र पृ० 346. 347. 348*